रामचरित्मानस

बालकाण्ड

कवि वंदना

*** चरन कमल बंदउँ तिन्ह केरे। पुरवहुँ सकल मनोरथ मेरे॥ कलि के कबिन्ह करउँ परनामा। जिन्ह बरने रघुपति गुन ग्रामा॥2॥
भावार्थ:
मैं उन सब (श्रेष्ठ कवियों) के चरणकमलों में प्रणाम करता हूँ, वे मेरे सब मनोरथों को पूरा करें। कलियुग के भी उन कवियों को मैं प्रणाम करता हूँ, जिन्होंने श्री रघुनाथजी के गुण समूहों का वर्णन किया है॥2॥
*** जे प्राकृत कबि परम सयाने। भाषाँ जिन्ह हरि चरित बखाने॥ भए जे अहहिं जे होइहहिं आगें। प्रनवउँ सबहि कपट सब त्यागें॥3॥
भावार्थ:
जो बड़े बुद्धिमान प्राकृत कवि हैं, जिन्होंने भाषा में हरि चरित्रों का वर्णन किया है, जो ऐसे कवि पहले हो चुके हैं, जो इस समय वर्तमान हैं और जो आगे होंगे, उन सबको मैं सारा कपट त्यागकर प्रणाम करता हूँ॥3॥
*** होहु प्रसन्न देहु बरदानू। साधु समाज भनिति सनमानू॥ जो प्रबंध बुध नहिं आदरहीं। सो श्रम बादि बाल कबि करहीं॥4॥
भावार्थ:
आप सब प्रसन्न होकर यह वरदान दीजिए कि साधु समाज में मेरी कविता का सम्मान हो, क्योंकि बुद्धिमान लोग जिस कविता का आदर नहीं करते, मूर्ख कवि ही उसकी रचना का व्यर्थ परिश्रम करते हैं॥4॥
*** कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥ राम सुकीरति भनिति भदेसा। असमंजस अस मोहि अँदेसा॥5॥
भावार्थ:
कीर्ति, कविता और सम्पत्ति वही उत्तम है, जो गंगाजी की तरह सबका हित करने वाली हो। श्री रामचन्द्रजी की कीर्ति तो बड़ी सुंदर (सबका अनन्त कल्याण करने वाली ही) है, परन्तु मेरी कविता भद्दी है। यह असामंजस्य है (अर्थात इन दोनों का मेल नहीं मिलता), इसी की मुझे चिन्ता है॥5॥

*** तुम्हरी कृपाँ सुलभ सोउ मोरे। सिअनि सुहावनि टाट पटोरे॥6॥

भावार्थ:

परन्तु हे कवियों! आपकी कृपा से यह बात भी मेरे लिए सुलभ हो सकती है। रेशम की सिलाई टाट पर भी सुहावनी लगती है॥6॥ दोहा :

*** सरल कबित कीरति बिमल सोइ आदरहिं सुजान। सहज बयर बिसराइ रिपु जो सुनि करहिं बखान॥14 क॥

भावार्थ:

चतुर पुरुष उसी कविता का आदर करते हैं, जो सरल हो और जिसमें निर्मल चरित्र का वर्णन हो तथा जिसे सुनकर शत्रु भी स्वाभाविक बैर को भूलकर सराहना करनेलगें॥14 (क)॥ सो न होई बिनु बिमल मति मोहि मति बल अति थोर। करहु कृपा हरिजस कहउँ पुनि पुनि करउँ निहोर॥14 ख॥

भावार्थ:

ऐसी कविता बिना निर्मल बुद्धि के होती नहीं और मेरी बुद्धि का बल बहुत ही थोड़ा है इसलिए बार-बार निहोरा करता हूँ कि हे कवियों! आप कृपा करें, जिससे मैं हरि यश का वर्णन कर सकूँ॥14 (ख)॥

*** कबि कोबिद रघुबर चरित मानस मंजु मराल। बालबिनय सुनि सुरुचि लखि मो पर होहु कृपाल॥14 ग॥

भावार्थ:

कवि और पण्डितगण! आप जो रामचरित्र रूपी मानसरोवर के सुंदर हंस हैं, मुझ बालक की विनती सुनकर और सुंदर रुचि देखकर मुझ पर कृपा करें॥14 (ग)॥ वाल्मीकि, वेद, ब्रह्मा, देवता, शिव, पार्वती आदि की वंदना सोरठा :

*** बंदउँ मुनि पद कंजु रामायन जेहिं निरमयउ। सखर सुकोमल मंजु दोष रहित दूषन सहित॥14 घ॥

भावार्थ:

मैं उन वाल्मीकि मुनि के चरण कमलों की वंदना करता हूँ, जिन्होंने रामायण की रचना की है, जो खर (राक्षस) सहित होने पर भी (खर (कठोर) से विपरीत) बड़ी कोमल और सुंदर है तथा जो दूषण (राक्षस) सहित होने पर भी दूषण अर्थात् दोष से रहित है॥14 (घ)॥

*** बंदउँ चारिउ बेद भव बारिधि बोहित सरिस। जिन्हहि न सपनेहुँ खेद बरनत रघुबर बिसद जसु॥14 ङ॥

भावार्थ:

मैं चारों वेदों की वन्दना करता हूँ, जो संसार समुद्र के पार होने के लिए जहाज के समान हैं तथा जिन्हें श्री रघुनाथजी का निर्मल यश वर्णन करते स्वप्न में भी खेद (थकावट) नहीं होता॥14 (ङ)॥

*** बंदउँ बिधि पद रेनु भव सागर जेहिं कीन्ह जहँ। संत सुधा ससि धेनु प्रगटे खल बिष बारुनी॥14च॥

भावार्थ:

मैं ब्रह्माजी के चरण रज की वन्दना करता हूँ, जिन्होंने भवसागर बनाया है, जहाँ से एक ओर संतरूपी अमृत, चन्द्रमा और कामधेनु निकले और दूसरी ओर दुष्ट मनुष्य रूपी विष और मदिरा उत्पन्न हुए॥14 (च)॥ दोहा :

*** बिबुध बिप्र बुध ग्रह चरन बंदि कहउँ कर जोरि। होइ प्रसन्न पुरवहु सकल मंजु मनोरथ मोरि॥14 छ॥

भावार्थ:

देवता, ब्राह्मण, पंडित, ग्रह- इन सबके चरणों की वंदना करके हाथ जोड़कर कहता हूँ कि आप प्रसन्न होकर मेरे सारे सुंदर मनोरथों को पूरा करें॥14 (छ)॥

चौपाई :

*** पुनि बंदउँ सारद सुरसरिता। जुगल पुनीत मनोहर चरिता॥ मज्जन पान पाप हर एका। कहत सुनत एक हर अबिबेका॥1॥

भावार्थ:

फिर मैं सरस्वती और देवनदी गंगाजी की वंदना करता हूँ। दोनों पवित्र और मनोहर चरित्र वाली हैं। एक (गंगाजी) स्नान करने और जल पीने से पापों को हरती है और दूसरी (सरस्वतीजी) गुण और यश कहने और सुनने से अज्ञान का नाश कर देती है॥1॥

*** गुर पितु मातु महेस भवानी। प्रनवउँ दीनबंधु दिन दानी॥ सेवक स्वामि सखा सिय पी के। हित निरुपधि सब बिधि तुलसी के॥2॥

भावार्थ:

श्री महेश और पार्वती को मैं प्रणाम करता हूँ, जो मेरे गुरु और माता-पिता हैं, जो दीनबन्धु और नित्य दान करने वाले हैं, जो सीतापति श्री रामचन्द्रजी के सेवक, स्वामी और सखा हैं तथा मुझ तुलसीदास का सब प्रकार से कपटरहित (सच्चा) हित करने वाले हैं॥2॥

*** कलि बिलोकि जग हित हर गिरिजा। साबर मंत्र जाल जिन्ह सिरिजा॥ अनमिल आखर अरथ न जापू। प्रगट प्रभाउ महेस प्रतापू॥3॥

भावार्थ:

जिन शिव-पार्वती ने कलियुग को देखकर, जगत के हित के लिए, शाबर मन्त्र समूह की रचना की, जिन मंत्रों के अक्षर बेमेल हैं, जिनका न कोई ठीक अर्थ होता है और न जप ही होता है, तथापि श्री शिवजी के प्रताप से जिनका प्रभाव प्रत्यक्ष है॥3॥

*** सो उमेस मोहि पर अनुकूला। करिहिं कथा मुद मंगल मूला॥ सुमिरि सिवा सिव पाइ पसाऊ बस्नउँ रामचरित चित चाऊ॥4॥

भावार्थ:

वे उमापति शिवजी मुझ पर प्रसन्न होकर (श्री रामजी की) इस कथा को आनन्द और मंगल की मूल (उत्पन्न करने वाली) बनाएँगे। इस प्रकार पार्वतीजी और शिवजी दोनों का स्मरण करके और उनका प्रसाद पाकर मैं चाव भरे चित्त से श्री रामचरित्र का वर्णन करता हूँ॥4॥

*** भनिति मोरि सिव कृपाँ बिभाती। ससि समाज मिलि मनहुँ सुराती॥ जेएहि कथहि सनेह समेता। कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता॥5॥ होइहहिं राम चरन अनुरागी। कलि मल रहित सुमंगल भागी॥6॥

भावार्थ:

मेरी कविता श्री शिवजी की कृपा से ऐसी सुशोभित होगी, जैसी तारागणों के सहित चन्द्रमा के साथ रात्रि शोभित होती है, जो इस कथा को प्रेम सहित एवं सावधानी के साथ समझ-बूझकर कहें-सुनेंगे, वे कलियुग के पापों से रहित और सुंदर कल्याण केभागी होकर श्री रामचन्द्रजी के चरणों के प्रेमी बन जाएँगे॥5-6॥ दोहा :

*** सपनेहुँ साचेहुँ मोहि पर जौं हर गौरि पसाउ। तौ फुर होउ जो कहेउँ सब भाषा भनिति प्रभाउ॥15॥

भावार्थ:

यदि मुझ पर श्री शिवजी और पार्वतीजी की स्वप्न में भी सचमुच प्रसन्नता हो, तो मैंने इस भाषा कविता का जो प्रभाव कहा है, वह सब सच हो॥15॥ श्री सीताराम-धाम-परिकर वंदना

चौपाई :

*** बंदउँ अवध पुरी अति पावनि। सरजू सरि कलि कलुष नसावनि॥ प्रनवउँ पुर नर नारि बहोरी। ममता जिन्ह पर प्रभुहि न थोरी॥1॥

भावार्थ:

मैं अति पवित्र श्री अयोध्यापुरी और कलियुग के पापों का नाश करने वाली श्रीसरयू नदी की वन्दना करता हूँ। फिर अवधपुरी के उन नस्नारियों को प्रणाम करता हूँ, जिन पर प्रभु श्री रामचन्द्रजी की ममता थोड़ी नहीं है (अर्थात् बहुतहै)॥1॥

*** सिय निंदक अघ ओघ नसाए। लोक बिसोक बनाइ बसाए॥ बंदउँ कौसल्या दिसि प्राची। कीरति जासु सकल जग माची॥2॥

भावार्थ:

उन्होंने (अपनी पुरी में रहने वाले) सीताजी की निंदा करने वाले (धोबी और उसके समर्थक पुर-नर-नारियों) के पाप समूह को नाश कर उनको शोकरहित बनाकर अपने लोक (धाम) में बसा दिया। मैं कौशल्या रूपी पूर्व दिशा की वन्दना करता हूँ, जिसकी कीर्ति समस्त संसार में फैल रही है॥2॥

*** प्रगटेउ जहँ रघुपति ससि चारू। बिस्व सुखद खल कमल तुसारू॥ दसरथ राउ सहित सब रानी। सुकृत सुमंगल मूरति मानी॥3॥ करउँ प्रनाम करम मन बानी। करहु कृपा सुत सेवक जानी॥

जिन्हहि बिरचि बड़ भयउ बिधाता। महिमा अवधि राम पितु माता॥4॥

भावार्थ:

जहाँ (कौशल्या रूपी पूर्व दिशा) से विश्व को सुख देने वाले और दुष्ट रूपी कमलों के लिए पाले के समान श्री रामचन्द्रजी रूपी सुंदर चंद्रमा प्रकट हुए। सब रानियों सहित राजा दशरथजी को पुण्य और सुंदर कल्याण की मूर्ति मानकर मैं मन, वचन और कर्म से प्रणाम करता हूँ।अपने पुत्र का सेवक जानकर वे मुझ पर कृपा करें, जिनको रचकर ब्रह्माजी ने भी बड़ाई पाई तथा जो श्री रामजी के माता और पिता होने के कारण महिमा की सीमा हैं॥3-4॥

सोरठा :

*** बंदउँ अवध भुआल सत्य प्रेम जेहि राम पद। बिछुरत दीनदयाल प्रिय तनु तृन इव परिहरेउ॥16॥

भावार्थ:

मैं अवध के राजा श्री दशरथजी की वन्दना करता हूँ, जिनका श्री रामजी के चरणों में सच्चा प्रेम था, जिन्होंने दीनदयालु प्रभु के बिछुड़ते ही अपने प्यारेशरीर को मामूली तिनके की तरह त्याग दिया॥16॥

चौपाई :

*** प्रनवउँ परिजन सहित बिदेहू। जाहि राम पद गूढ़ सनेहू॥ जोग भोग महँ राखेउ गोई। राम बिलोकत प्रगटेउ सोई॥1॥

भावार्थ:

मैं परिवार सहित राजा जनकजी को प्रणाम करता हूँ, जिनका श्री रामजी के चरणों में गूढ़ प्रेम था, जिसको उन्होंने योग और भोग में छिपा रखा था, परन्तु श्री रामचन्द्रजी को देखते ही वह प्रकट हो गया॥1॥

*** प्रनवउँ प्रथम भरत के चरना। जासु नेम ब्रत जाइ न बरना॥ राम चरन पंकज मन जासू। लुबुध मधुप इव तजइ न पासू॥2॥

भावार्थ:

(भाइयों में) सबसे पहले मैं श्री भरतजी के चरणों को प्रणाम करता हूँ, जिनका नियम और व्रत वर्णन नहीं किया जा सकता तथा जिनका मन श्री रामजी के चरणकमलों में भौंरे की तरह लुभाया हुआ है, कभी उनका पास नहीं छोड़ता॥2॥

*** बंदउँ लछिमन पद जल जाता। सीतल सुभग भगत सुख दाता॥ रघुपति कीरति बिमल पताका। दंड समान भयउ जस जाका॥3॥

भावार्थ:

मैं श्री लक्ष्मणजी के चरण कमलों को प्रणाम करता हूँ, जो शीतल सुंदर और भक्तों को सुख देने वाले हैं। श्री रघुनाथजी की कीर्ति रूपी विमल पताका में जिनका (लक्ष्मणजी का) यश (पताका को

ऊँचा करके फहराने वाले) दंड के समान हुआ॥3॥

*** सेष सहस्रसीस जग कारन। जो अवतरेउ भूमि भय टारन॥ सदा सो सानुकूल रह मो पर। कृपासिन्धु सौमित्रि गुनाकर॥4॥

भावार्थ:

जो हजार सिर वाले और जगत के कारण (हजार सिरों पर जगत को धारण कर रखने वाले) शेषजी हैं, जिन्होंने पृथ्वी का भय दूर करने के लिए अवतार लिया, वे गुणों की खान कृपासिन्धु सुमित्रानंदन श्री लक्ष्मणजी मुझ पर सदा प्रसन्न रहें॥4॥

*** रिपुसूदन पद कमल नमामी। सूर सुसील भरत अनुगामी॥ महाबीर बिनवउँ हनुमाना। राम जासु जस आप बखाना॥5॥

भावार्थ:

मैं श्री शत्रुघ्नजी के चरणकमलों को प्रणाम करता हूँ, जो बड़े वीर, सुशील और श्री भरतजी के पीछे चलने वाले हैं। मैं महावीर श्री हनुमानजी की विनती करता हूँ, जिनके यश का श्री रामचन्द्रजी ने स्वयं (अपने श्रीमुख से) वर्णन किया है॥5॥

सोरठा :

*** प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन। जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर॥17॥

भावार्थ:

मैं पवनकुमार श्री हनुमान्‌जी को प्रणाम करता हूँ, जो दुष्ट रूपी वन को भस्म करने के लिए अग्निरूप हैं, जो ज्ञान की घनमूर्ति हैं और जिनके हृदय रूपी भवन में धनुष-बाण धारण किए श्री रामजी निवास करते हैं॥17॥

चौपाई :

*** कपिपति रीछ निसाचर राजा। अंगदादि जे कीस समाजा॥ बंदउँ सब के चरन सुहाए। अधम सरीर राम जिन्ह पाए॥1॥

भावार्थ:

वानरों के राजा सुग्रीवजी, रीछों के राजा जाम्बवानजी, राक्षसों के राजा विभीषणजी और अंगदजी आदि जितना वानरों का समाज है, सबके सुंदर चरणों की मैं वदना करता हूँ, जिन्होंने अधम (पशु और राक्षस आदि) शरीर में भी श्री रामचन्द्रजी को प्राप्त कर लिया॥1॥

*** रघुपति चरन उपासक जेते। खग मृग सुर नर असुर समेते॥ बंदउँ पद सरोज सब केरे। जे बिनु काम राम के चेरे॥2॥

भावार्थ:

पशु, पक्षी, देवता, मनुष्य, असुर समेत जितने श्री रामजी के चरणों के उपासक हैं, मैं उन सबके चरणकमलों की वंदना करता हूँ, जो श्री रामजी के निष्काम सेवक हैं॥2॥

*** सुक सनकादि भगत मुनि नारद। जे मुनिबर बिग्यान बिसारद॥ प्रनवउँ सबहि धरनि धरि सीसा। करहु कृपा जन जानि मुनीसा॥3॥

भावार्थ:

शुकदेवजी, सनकादि, नारदमुनि आदि जितने भक्त और परम ज्ञानी श्रेष्ठ मुनि हैं, मैं धरती पर सिर टेककर उन सबको प्रणाम करता हूँ, हे मुनीश्वरों! आप सब मुझको अपना दास जानकर कृपा कीजिए॥3॥

*** जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की॥ ताके जुग पद कमल मनावउँ। जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ॥4॥

भावार्थ:

राजा जनक की पुत्री, जगत की माता और करुणा निधान श्री रामचन्द्रजी की प्रियतमा श्री जानकीजी के दोनों चरण कमलों को मैं मनाता हूँ, जिनकी कृपा से निर्मल बुद्धि पाऊँ॥4॥

*** पुनि मन बचन कर्म रघुनायक। चरन कमल बंदउँ सब लायक॥ राजीवनयन धरें धनु सायक। भगत बिपति भंजन सुखदायक॥5॥

भावार्थ:

फिर मैं मन, वचन और कर्म से कमलनयन, धनुष-बाणधारी, भक्तों की विपत्ति का नाश करने और उन्हें सुख देने वाले भगवान् श्री रघुनाथजी के सर्व समर्थ चरण कमलों की वन्दना करता हूँ॥5॥

दोहा :

*** गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न। बंदउँ सीता राम पद जिन्हहि परम प्रिय खिन्न॥18॥

भावार्थ:

जो वाणी और उसके अर्थ तथा जल और जल की लहर के समान कहने में अलग-अलग हैं, परन्तु वास्तव में अभिन्न (एक) हैं, उन श्री सीतारामजी के चरणों की मैं वंदना करता हूँ, जिन्हें दीन-दुःखी बहुत ही प्रिय हैं॥18॥ **अगला पेज...**

रामचरित्मानस

बालकाण्ड